University of Chicago Library Scan and Deliver

ILLiad TN: 2340962

TN:2340962

Journal Title: Bhaktamāla Caturadāsa kṛta Ṭīkā sahita

Volume: c.1
Issue:
Month/Year: 1965
Pages: 133-135

Article Author:

Article Title: Section on pp. 133-135

Cited In: ScanDelver

Notes:

Print Date:1/23/2019 3:01 PM

Call #: PK2479.R3B480 c.1

Location: JRL / Gen

Barcode:39744642

ODYSSEY REQUEST

Eric Gurevitch
gurevitch@uchicago.edu

Sent ________

ODYSSEY REQUEST

Notice: This material may be protected by copyright law (Title 17 US Code)

राजस्थान पुरातन ग्रन्थमाला

राजस्थान राज्य द्वारा प्रकाशित

सामान्यतः अखिल भारतीय तथा विशेषतः राजस्थानदेशीय पुरातनकालीन
संस्कृत, प्राकृत, अपभ्रंश, राजस्थानी, हिन्दी आदि भाषानिबद्ध
विविध वाङ्मयप्रकाशिनी विशिष्ट ग्रन्थावलि

प्रधान सम्पादक

पद्मश्री मुनि जिनविजय, पुरातत्त्वाचार्य

सम्मान्य सञ्चालक, राजस्थान प्राच्यविद्या प्रतिष्ठान, जोधपुर;
ऑनरेरि मेम्बर ऑफ जर्मन ओरिएण्टल सोसाइटी, जर्मनी;
निवृत्त सम्मान्य नियामक (ऑनरेरि डायरेक्टर),
भारतीय विद्याभवन, बम्बई; प्रधान सम्पादक,
सिंघी जैन ग्रन्थमाला, इत्यादि।

ग्रन्थाङ्क ७८

राघवदास कृत

भक्तमाल

(चतुरदास कृत टीका सहित)

प्रकाशक

राजस्थान राज्याज्ञानुसार

सञ्चालक, राजस्थान प्राच्यविद्या प्रतिष्ठान

जोधपुर (राजस्थान)

राघवदास कृत

भक्तमाल

(चतुरदास कृत टीका सहित)

सम्पादक

श्री अगरचन्द नाहटा

प्रकाशनकर्त्ता

राजस्थान राज्याज्ञानुसार

सञ्चालक, राजस्थान प्राच्यविद्या प्रतिष्ठान

जोधपुर (राजस्थान)

विक्रमाब्द २०२१ } भारतराष्ट्रीय शकाब्द १८८५ { खिस्ताब्द १९६५
प्रथमावृत्ति १००० } { मूल्य रु० ६.७५

मुद्रक : जगदीशचन्द्र स्वर्णकार, अजन्ता प्रिण्टर्स, जोधपुर.

खीर नीर निखारि, सुगम करि श्रब कौं पायौ।
अनन्य धर्म के कबित, अैन अमृत के प्याले।
मुरलीधर की छाप, छिपै नहीं श्रबत चाले।
जन राघव बल भजन के, गौंड देस कियौ धर्म-धुज।
यौं हूवो हरिबंस प्रताप तें, चहुं दिसि परगट चतुरभुज ॥२५९

टीका

इंदव गौंडहु देस भगत्ति नही अणु, माणस मारि र मात चढावै।
छंद जाइ जहां[1] उन मंत्र सुनावत, दे सुपनौं सब गांव जगावै।
धाय करौ तुम चतुरभुजें गुर, नां करिहौ मरिहौ पुर आवैं।
सिष्ष किये धरि स्वांग जिये उन, पाव लिये बहुतें सुख पावै ॥३९९
भोग लगावत साध लड़ावत, भागवतं कहि भक्ति बधावै।
लै धन चोर चल्यौ उन संगहि, आत धनी जन मैं छिपि जावै।
दक्षत दूसर जोनि भई सुनि, स्वांमिन पैं डरि कांन फुकावै।
आंनि गह्यौ कहि मैं न लयौ अब, हाथि दई दिबि नांहीं जरावै ॥४००
भूपति झूठ लखी कहि मारहु, संतन आय कलंक दयौ है।
मारन जात भये न सकै सहि, नीर बहै द्रिग कैत लयौ है।
भूप कहै तुम साच तजौ जिन[2], स्वांमिन कौ परताप भयौ है।
राज सुनी महिमां सु हुवो सिष, पेम-सन्यौ उर भीजि गयौ है ॥४०१
खेत पक्यौ लखि साध सु तोरत, सूकि मुखै रखवार पुकारै।
नांव कह्यौ सुनियौ सु हमारहि, आप सुनी जब होत सुखारे।
लै परसाद गये जन सांम्हन, मो अपनाइ र आज उधारे।
धांम सु भोजन भांतिन भांतिन, ज्यांत भये चरचा सु उचारे ॥४०२

मूल

छपै लग्यौ[3] लटेरा लटिकि कैं, केसौ केवल रांम सौं ॥
कबित सवैईया गीत, भाखि भगवंत रिझायौ।
सुरसुरानन्द परताप, आप हरि हिरदै आयौ।
जथा-जोगि जस गाय, लोक परलोक सुधारचौ।
परसरांम-सुत सरस, सकल घट ब्रह्म बिचारचौ।

१. तहां। २. जन। ३. लगौं, लयौ।

राति दिवस राधौ कहै, धरम न चूकौ धांम सूं।
लग्यौ लटेरा लटिकि कैं, केसौ केवल रांम सूं ॥२६०
गोपी कलि मनु अवतरी, प्रमानंद भयौ प्रेम पर ॥
बालि अवसथा तीन, गोपि गुण परगट गाये।
नहीं अचम्भा कोइ, आदि को सखा सुहाये।
राति दिवस सब रोम उठै, जल बहै द्रिगन तें।
कृष्ण सोभि तन गलित गिरा, गद-गद सुमगन तें।
संग्या सारंगी कहौ[1], सुनत कांन आवे सकर।
गोपि कलि मनु अवतरी, प्रमांनंद भयो प्रेम पर ॥२६१

मनहर प्रेम कौ प्रवाह सुण[2] सागर गिरा कौ पुंज,
छंद चोज कौं चतुर प्रमांनंद प्रबीन है।
गावत गुनांनबाद गोबिंद गोपाल हरि,
रांम नांम हिरदै धरि भयौ लिवलीन है।
बीनती बिकट नट नृति करै राति-दिन,
नाचत निराट दीनांनाथ आगैं दीन है।
राघौ कहै बिरहै मिलाप सूं मिलाप कीन्हौं,
बिधनां सूं बेध्यौ प्रांन जैसे जल मींन है ॥२६२

छपै सुणत सूर की काबि कबि, सिर धुनै र धनि धनि करै ॥
रांमाइण भागवत, भक्ति दसधा सुणि सारी।
परसताव को पुंज, चोज चुणि काढ़ी न्यारी।
सकल पराकृत संसकृत, सिंध सम मथ्यौ सवायौ।
करूणां प्रेम बिजोग, आदि अनुक्रम सौं गायौ।
बालमीक-कृत व्यास-कृत, जन राघो पद पटतर धरै।
सुनत सूर की काबि कबि, सिर धुनै र धनि धनि करै ॥२६३

इंदव सागर सूर भई सलिता बुधि, बोध निरोध लीयो जिन पांणी।
छंद प्रेम कौ प्रेम बढ्यौ उर अन्तर, यौं[3] उभली मुख ह्वै अति बाणी।
जैसैं सुण्यौ समयौ तहां तैसोई, सोई निबाह कीयौ जहां जांणी।
राघो कहै सुरसति बर बारि ज्यूं, यौं सर्ब चोज सबद में आंणी ॥२६४

१. कहै। २. गुण। ३. यौं।

छपै बिलमंगल राघो कहै, स्यांम कृपा को परबिदत ॥
उक्ति जुक्ति पुनि चोज, कबित कीये करूणांमृत ।
संत जनन आधार उर, जहां रावल सुभ कृत ।
प्रभु कर स्वैकर देई, छाय धरि कै छुटवाये ।
सबल गिणौंगौं तबैं, जबैं हिरदा तैं जाये ।
चितामनि उपदेस करि, गुर सोमगिरी धारे सदित ।
बिलमंगल राघो कहै, स्यांम कृपा को परबिदत ॥२६५

टीका

इंदव ब्राह्मन बुद्ध रहै कृसनां-तटि, पाइ चिंतामनि बुद्धि बही है ।
छंद लाज तजी हिय राज भयौ उस, रैंनि दिनैं उत जात सही है ।
तात कनागत साधि रह्यौ चित, सेस रहैं दिन चालत ही है ।
नीर चह्यौ सलिता निसि नाव न, हेत घणौ दुःख पाइ कही है ॥४०३
तार परा नहि देह रहै परि, मित्र मिलै यह बात भली है ।
जकि परचौ कछू नांहि डर्‌यौ मन, बाहि कर्‌यौ कित आत[1] चलो है ।
पार न पावत डूबत जावत, आतमड़ा चढि नांवड़ली है ।
जाइ लग्यौ तटि पाय चल्यौ झटि, पाट जड़े लखि आँखि खुली है ॥४०४
सांप लटकिक रह्यौ लखि लाव सूं, मूंठिनि सू छति जाइ चढ्‌यौ जू ।
ऊपर के[2] पट लागि रहे फिरि, कूदि परचौ ग्रत मांहि गड़्यौ जू ।
जागि उठी करि दीपक देखत, है बिलमंगल नांहि पड्‌यौ जू ।
नीर नहावत चीर उठावत, हा किम आवत तोइ बढ्‌यौ जू ॥४०५
नाव पठावत लाव झुलावत, सो मन मैं हम जांनि लई है ।
चालि दिखाइ भई कछु स्यांनिहि, देखि भवंगम आहि दई है ।
ज्यूं मन मांस र चांम लग्यौ मम, यौं हरि लाइ सयांनपई है ।
प्रात भयें हम तौ भजि हैं प्रभु, तो मन की अब तू जनई है ॥४०६
नैंन खुले हरि रूपहि चाहत, रंग उमंग सु अंग न मावै ।
बीन बजावत स्यांम रिझावत, कोटि बिषै सुख चित्त न आवै ।
बीति गई निसि ओउ भये रसि, मारग आपन आपन जावै ।
सोमगिरी अभिरांम करे गुर, कौंन कहै उपमां उर भावै ॥ ४०७

१. आंन । २. को ।

येक बरस्स रहे रस-सागर, लीन भये सु सिलोक पढे हैं ।
जात बृंदाबन देखन कूं मन, मारग मैं इक ठौर रढे हैं ।
सोर सुन्यौ बड़ आप गये सर, न्हात तिया लखि नैंन गड़े हैं ।
ऊठि चली वह लार लगे यह, खैर धसी घर द्वार खड़े है ॥४०८
आत भयो पति देखि बड़े जन, क्यूं र खड़े तिरिया सु जनाई ।
आप कही घर पांवन कीजिय, लै चरणांमृत यौं मन आई ।
मांहि गये मन आरति मेटन, गांवन रीति जु देत चिताई ।
अंग बनाइ कही तिय सुं पति, संत रिझाइ हरी सुखदाई ॥४०९
अंग बनाइ चली कर थारहु, ऊँच अटा जित है अनुरागी ।
झंझन जाइ खरी कर जोरि रु, देखत ही मति नूंन दु भागी ।
सूइ मंगावत वै फिरि ल्यावत, फेरि[1] दई अखियां यह लागी ।
आंनि कही पति सूँ सब बातन, जाइ परचौ पगि सो बड़भागी ॥४१०
पाप करचौ हम संत दुखावत, हौ तुम संत हमैं अपराधी ।
ब्याज रहौ हम सेव करैं तुम, सेव करी सबही बिधि साधी ।
ऊठि चले द्विग भूत छुड़ाइ र, खेम भयौ उर आंखि न लाधी ।
जाइ बसे बनि भूख लगी पनि, आप जिमावत जांनि अराधी ॥४११
हाथ गहाइ चले तर कै तरि, जोर छुड़ात न छोड़त नीकौ ।
जोर करै नहि वोउ हरै कर, लेत छुड़ाइ न छूटत ही कौ ।
यौं करि आइ लयौ सु बृंदाबन, पीतर सौं जग लागत फीकौ ।
लाल बिहारिहु आइ मिले, मुरली बजई यह भावत जी कौ ॥४११
नैंन खुले रवि ऊगत अंबुज, देखि सरूपहि चाहि भई है ।
बंसि सुनि रस मिष्ट सुरें मद, कांन भरचौ मुख भास लई है ।
जांनि प्रताप चितामनि कौ मन, जैति[2] चिंतामनि आदि दई है ।
गृंथ करचौ करुणांमृत पंथज, जुगल्ल कहचौ रसरासि-मई है ॥४१२
लाल मिले बन मांहि सुनी चलि, आत चिंतामनि हेत जनायौ ।
मांन दयो उठि दूध रु भातहि, देत भयो हरि ताहि पठायौ ।
लेत नहीं तुम कौं पठयौ प्रभु, नांथ हमैं कर दे तब भायौ ।
पात नहीं जुग देखत कौतुग, स्यांम जबैं इक और खिनायौ[3] ॥४१३

इति नींबादति संप्रदा संपूरण

१. फौरि । २. जौति । ३. सिनायौ ।